International Journal of Applied Research 2017; 3(6): 1216-1218

International Journal of Applied Research

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(6): 1216-1218
www.allresearchjournal.com
Received: 22-04-2017
Accepted: 27-05-2017

मनोज चौधरी
शोधार्थी, शिक्षा संकाय, आइसेक्ट विश्वविद्यालय, रायसेन, (म0प्र0), भारत।

Correspondence
मनोज चौधरी
शोधार्थी, शिक्षा संकाय, आइसेक्ट विश्वविद्यालय, रायसेन, (म0प्र0), भारत।

बौद्ध दर्शन का उद्भव, विकास और साहित्यिक विकास

मनोज चौधरी

सारांश
प्रस्तुत शोधपत्र में बौद्ध दर्शन का उद्भव, विकास और साहित्यिक विकास पर प्रकाश डाला गया है। बौद्ध धर्म का प्रादुर्भाव भारतवर्ष की पवित्र धरा पर हुआ भारत भूमि पर विभिन्न दार्शनिक सम्प्रदायों का उदय हुआ, जिनमें बौद्ध धर्म दर्शन का अपना विशेष महत्त्व है, समस्त जगत को अपने ज्ञान से आलोकित करने वाले ज्ञान के महासागर भगवान् बुद्ध ने इस पवित्र धर्म का उपदेश दिया। तथागत बुद्ध ने इसका उपदेश मगध में बोली जाने वाली जनसामान्य की भाषा (पालि) में दिया। अनेक आडम्बरों, कर्मकाण्डों से पीड़ित जनता के लिए यह अत्यन्त सरल, सहज तथा परिस्थितियों के अनुकूल थी। सम्यक् सम्बुद्ध चाहते तो अन्य भाषा में धर्मोपदेश कर सकते थे, परन्तु वे जनता के लिए सर्वग्राह्य तथा प्रत्येक नागरिको जिसका लाभ हो, ऐसे धर्म की स्थापना चाहते थे जिससे लोग व्यर्थ के आडम्बरों से बचकर वास्तविक ज्ञान को प्राप्त कर सकें।

मुख्य शब्द : बौद्ध धर्म, उद्भव, विकास, राजधर्म, साहित्यिक विकास।

प्रस्तावना
बौद्ध दर्शन तीन मूल सिद्धांत पर आधारित माना गया है– 1.अनीश्वरवाद 2.अनात्मवाद 3.क्षणिकवाद। यह दर्शन पूरी तरह से यथार्थ में जीने की शिक्षा देती है।

1. अनीश्वरवाद
बुद्ध ईश्वर की सत्ता नहीं मानते क्योंकि दुनिया प्रतीत्यसमुत्पाद के नियम पर चलती है। प्रतीत्यसमुत्पाद अर्थात कारण–कार्य की श्रृंखला। इस श्रृंखला के कई चक्र हैं जिन्हें बारह अंगों में बाँटा गया है। अतः इस ब्रह्मांड को कोई चलाने वाला नहीं है, न ही कोई उत्पत्तिकर्ता, क्योंकि उत्पत्ति कहने से अंत का आभास होता है। तब न कोई प्रारंभ है और न अंत।

2. अनात्मवाद
अनात्मवाद का यह मतलब नहीं कि सच में ही आत्मा नहीं है। जिसे लोग आत्मा समझते हैं, वो चेतना का अविच्छिन्न प्रवाह है। यह प्रवाह कभी भी बिखरकर जड़ से बद्ध हो सकता है और कभी भी अंधकार में लीन हो सकता है। स्वयं के जाने बगैर आत्मवान नहीं हुआ जा सकता। निर्वाण की अवस्था में ही स्वयं को जाना जा सकता है। मरने के बाद आत्मा महा सुसुप्ति में खो जाती है। वह अनंतकाल तक अंधकार में पड़ी रह सकती है या तक्षण ही दूसरा जन्म लेकर संसार के चक्र में फिर से शामिल हो सकती है। अतः आत्मा तब तक आत्मा नहीं जब तक कि बुद्धत्व घटित न हो। अतः जो जानकार हैं वे ही स्वयं के होने को पुख्ता करने के प्रति चिंतित हैं।

3. क्षणिकवाद
इस ब्रह्मांड में सब कुछ क्षणिक और नश्वर है। कुछ भी स्थायी नहीं। सब कुछ परिवर्तनशील है। यह शरीर और ब्रह्मांड उसी तरह है जैसे कि घोड़े, पहिए और पालकी के संगठित रूप को रथ कहते हैं और इन्हें अलग करने से रथ का अस्तित्व नहीं माना जा सकता।

बौद्ध धर्म दर्शन का उद्भवए विकासए साहित्य का विकास
बुद्ध धर्म का उद्भव भगवान् गौतम बुद्ध की बोधि प्राप्ति के समय ईसा पूर्व छठी शताब्दी माना जाता है जबकि अनेक विद्वान् इसे ईसा से 1800 वर्ष पूर्व भी मानते है। साहित्यिक दृष्टि से बौद्ध धर्म का विकास छः संगीतियों का परिणाम है। इन संगीतियों में गौतम बुद्ध द्वारा निर्दिष्ट सिद्धान्तों को एकत्र कर लेखबद्ध किया गया और वही लेखबद्ध साहित्य त्रिपिटक नाम से प्रसिद्ध हुआ। सुत्तपिटक, विनयपिटक और अभिधम्मपिटक–यह तीन पिटक बौद्ध साहित्य के विकसित रूप के उपजीव्य भी

कहे जा सकते हैं क्योंकि इन्हीं के आधार पर आगे चलकर अनुपटिक साहित्य एवं परवर्ती बौद्ध साहित्य का विकास हुआ।

भगवान बुद्ध ने जिन चार आर्य सत्यों का साक्षात्कार किया वे निम्नलिखित हैं –

दुःख, दुःख समुदय, दुःख निरोध तथा दुःख– निरोध गामिनी प्रतिपदा इनकी व्याख्या उन्होने सरल एवं सुबोध रीति से लोकभाषा में दी तथागत के मुखारविन्द से प्रस्फुटित हुए उपदेशों में जीवन और जगत की व्याख्या के साथ–साथ दार्शनिक बिन्दुओं के संकेत भी प्राप्त होते हैं उसी काल में बौद्ध धर्म के साथ–साथ बौद्ध दर्शन का बीजारोपन भी हो चुका था। बौद्ध धर्म के तीन मौलिक सिद्धान्त हैं– सर्वनित्यम् (सब कुछ अनित्य है), सर्वमनात्मम् (समग्र वस्तुएं आत्मा से रहित हैं), निर्वाणं शान्तम् (निर्वाण ही शान्त है) इन तथ्यों का अनुशीलन तथागत के धर्म की विशिष्टता समझने के लिए पर्याप्त होगा।

श्चेरबात्स्की ने भारत में बौद्ध दर्शन का उद्भव एवं विकास काल 500 ई॰पू॰ से 1000 ई॰ तक माना हैं। इस समय को उन्होंने मुख्य–मुख्य विशेषताओं के आधार पर तीन युगों में विभाजित किया हैं। जिसमें प्रथम ई॰ पू॰ 500 से ई॰ सदी तक, द्वितीय युग ई॰ सदी के आरम्भ से पाँचवी सदी तक तथा तृतीय युग पाँचवी सदी से दशम सदी तक।

साहित्य की समीक्षा

आचार्यजी के ग्रन्थ की प्रधान विशेषता यह है कि इसमें बौद्धदर्शन के प्रत्ययों तथा द्विषयक विविध मतमतान्तरों का वर्णन मूल आचार्यों की पालि अथवा संस्कृत कृतियों के आधार पर किया गया है। पालि स्त्रोतों में त्रिपिटक के अतिरिक्त आचार्यजी ने षमिलिन्दपञ्होष महाकच्चान–कृच ष्नेतिपकरणष, बुद्धबोष–रचित ष्अट्ठकथाष्तथा षविशुद्धिमग्गोष एवं धर्मपाल स्थविर–रचित ष्अभिधम्मत्थ संगहोष जैसे पिटकबाह्य ग्रन्थों को आधार बनाया। संस्कृत साहित्य की जिन कृतियों का प्रभूत उपयोग किया गया है उनमें आर्य नागार्जुन–कृत ष्माध्यमिककारिकाष, आचार्य वसुबन्धु–कृत ष्प्रसन्नपदावृत्तिष प्रमुख है। आचार्यजी ने योरोपीय तथा भारतीय बौद्ध विद्वानों शेरवात्स्की, सिलवां लेवी, पूसें, लूडर्स, वासिलिफ, हरप्रसाद शास्त्री, राजेन्द्रलाल मित्र प्रभृति, के लेखन को भी ध्यान में रखा है।

कालिदास जैसे महाकवि को कनिष्ठिकाधिष्ठित, कविता कामिनी के विलास आदि विरुदों से सुशोभित किया गया है। कालिदास के ही समकालीन महाकवि अश्वघोष एवं बुद्धघोष ने अन्य महाकवियों की तरह पारम्परिक उपजीव्यों से हटकर बौद्ध धर्म को अपनी लेखनी का विषय बनाया और दर्शन जैसे विषय को सरल संस्कृत भाषा में उपनिबद्ध कर जनसाधारण तक पहुंचाने का सफल प्रयास किया। इन्हीं महाकवियों से प्रेरित होकर अनेक बौद्ध धर्म के अनन्य समर्थक महाकवियों ने संस्कृत भाषा को ही बौद्धसाहित्य को प्रसारित करने के लिए अपनाया और अनेक रचनाओं के द्वारा बौद्ध साहित्य को समृद्ध बनाया। इन महाकवियों में शिवस्वामी, आचार्य क्षेमेन्द्र, मातृचेट, आर्यशूर, आर्यचन्द्र, वसुबन्धु, धर्मकीर्ति, नागार्जुन, कुमारलात, दिङ्नाग, आर्यदेव, असंग, शान्तिदेव, शान्तरक्षित, चन्द्रगोमिन् आदि के नाम आते हैं। अनेक बौद्ध स्तोत्र तथा अवदान साहित्य भी संस्कृत भाषा में ही उपनिबद्ध है। इन्हीं महाकवियों की श्रेणी में अत्याधुनिक कवि आचार्य शान्तिभिक्षु शास्त्री जी का नाम आता है जिन्होंने वर्तमान युग में भी बौद्ध साहित्य को अपनी विशालकाय रचना बुद्धविजयकाव्य में संकलित कर अपनी बौद्ध धर्म के प्रति अनन्य आस्था एवं संस्कृत भाषा के प्रति अथाह भक्ति का परिचय दिया है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोधकार्य का उद्देश्य 'सुवर्णप्रभास सूत्र' में सांकेतिक रूप में छिपे हुए गूढ़ अर्थ का धर्म एवं दर्शन की दृष्टि से विशेषतः अध्ययन करना है जो कि शोधार्थियों के लिए अत्यन्त उपादेय एवं श्रेयस्कर होगा। तत्कालीन बौद्ध समाज के धार्मिक एवं दार्शनिक अध्ययन से सांस्कृतिक तथा मानवीय मूल्यों का ज्ञान सम्भव होगा। इसमें ऐतिहासिक एवं दार्शनिक विधि का प्रयोग किया गया है। अन्य ग्रन्थों के साथ तुलना प्रस्तुत की गयी है तथा व्यापक स्तर पर महायान बौद्ध परम्परा के परिप्रेक्ष्य में धार्मिक तथा दार्शनिक बिन्दुओं को स्थापित किया गया है।

अनुसंधान क्रिया विधि

भारतीय दार्शनिक विचार धारा का मूल सुख दुःख एवं आशा–निराशा की अनुभूति ही है। जीवन की विषमता, मनुष्य में पारस्परिक भेद, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि के चक्रव्यूह में फसे मनुष्य का चिन्तन उसे दुःख की ओर उन्मुख करता है और उस दुःख की निवृत्ति के लिए प्रयत्नशील भी होता है। इस दुःख की आत्यन्तिक निवृत्ति के लिए हमारे वैदिक ऋषियों ने दीर्घकाल तक ज्ञान की उपासना करते हुए जो तथ्य तथा अनुभव अर्जित किए, वही हमारी मूलभूत दार्शनिक विचारधारा है जिसका संकलन कालान्तर में हमारे दर्शन ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। ऋग्वैदिक काल में उद्भूत हुए यही मूल दार्शनिक तत्त्व ब्राह्मण, आरण्यक में विकास पाते हुए उपनिषदों में आकर पल्लवित हुए और वहाँ से अपने उपजीवी अंशों को लेकर विविध नामरूपों में प्रवाहित हुए और इन्हीं तत्त्वों को आधार बनाकर आचार्यों ने भिन्न–भिन्न ग्रन्थों को दर्शन के नाम से संसार में प्रकाशित किया। इन दार्शनिक ग्रन्थों का मुख्य लक्ष्य एक ही है और वह है दुःख की निवृत्ति अथवा परमानन्द की प्राप्ति।

इन दर्शन ग्रन्थों को आस्तिक एवं नास्तिक दो कोटियों में विभाजित करते हुए वेदों की प्रमाणिकता स्वीकार करने वाले दर्शनों को आस्तिक तथा अन्यों को नास्तिक कहा गया है।

आस्तिक दर्शनों में सामान्यतः छः दर्शन यथा न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, पूर्वमीमांसा, उत्तरमीमांसा तथा नास्तिक दर्शनों में चार्वाक, बौद्ध तथा जैन दर्शन को स्वीकृत किया गया है। जहाँ तक बौद्ध धर्म की नास्तिकता का विषय है, इसमें अवश्य मतभेद दिखाई देता है। बौद्ध धर्म में केवल उन वैदिक कर्मकाण्डीय परम्पराओं की आलोचना हुई जिसमें तपस्या एवं यज्ञादि के द्वारा मोक्षप्राप्ति की बात की गई। बुद्ध ने वेद या किसी अन्य ग्रन्थ में जो सत्य बात कही गई, उसे अंगीकार किया और जो उन्हें मूल तत्त्व दर्शन में बाधक लगी, उनका परित्याग किया। जिस प्रकार अन्य सभी दर्शन एक ही लक्ष्य की ओर अग्रसर दिखाई दिए, उसी प्रकार बौद्ध दर्शन का भी विवेच्य विषय वही था और वह था दुःखों से निवृत्ति एवं निर्वाण की प्राप्ति।

विश्लेषण

बौद्ध दर्शन के त्रिपिटकों में उपलब्ध बौद्ध दार्शनिक मान्यताओं के मूल में सर्वप्रथम चार आर्य सत्यों का ही उद्घोष हुआ है। दुःख, दुःख समुदय, दुःख निरोध और दुःखनिरोधगामिनी प्रतिपद। जहाँ दुःख का निरोध ही निर्वाण है, वहां दुःख निरोधगामिनी प्रतिपदा को ही आर्य अष्टांगिक मार्ग अथवा मध्यमा प्रतिपद् से अभिहत किया गया है। इन अष्टांगिक मार्गों में सम्यक दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाक् सम्यक् कर्म, सम्यगाजीव सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि के द्वारा संघ निर्वाण प्राप्ति की बात कही गई है। इन्हीं अष्टांगिक मार्गों को प्रज्ञा, शील तथा समाधि के अन्तर्गत रखा गया है। प्रतीत्यसमुत्पाद बौद्ध धर्म क मूलभूत स्थापनाओं में से एक है जिसमें दुःख के कारणों की श्रृंखलाबद्ध करते हुए एक कड़ी को दूसरी कड़ी से अन्योन्याश्रित बताते हुए सम्बद्ध किया है। निर्वाण बौद्ध धर्म का प्रमुख सिद्धान्त है जिसे अव्याख्येय और अनिर्वचनीय कहते हुए इसकी विस्तृत व्याख्या की गई है। वस्तुतः भारतीय दर्शनों में प्रख्यापित दुःख की अत्यन्त निवृत्ति रूप मोक्ष ही बौद्धधर्म सम्मत निर्वाण है। बौद्ध धर्म के अन्य मूलभूत सिद्धान्तों में अनात्मवाद, कर्मवाद,

पुनर्जन्मसिद्धान्त, अनित्यवाद, अनीश्वरवाद आदि की विशेष चर्चा बौद्ध दर्शन की अवान्तरमान्यताओं में बोधिसत्त्व, बोधिचित्त, कल्याणत्रय, बुद्धपूजा, पारमिताएं, शरणत्रय, पंचशील, आश्रवनिरोध, पंचस्कन्ध, द्वादश आयतन, अष्टादश धातु, चौत्तधर्म, कुशल व अकुशल धर्म आदि अनेक सिद्धान्तों का प्रचलन हुआ जिनका मूलरूप कहीं न कहीं त्रिपिटकों में अवश्य उपलब्ध होता है जिन्हें अर्वाचीन आचार्यों ने नए रूप में प्रचारित एवं प्रसारित किया।

निष्कर्ष

बौद्ध धर्म भी इसी भू–भाग पर भगवान् बुद्ध के मुखारविन्द से आविर्भूत हुआ है जिसकी ज्ञान–प्रभा से समस्त विश्व आलोकित है। तत्कालीन भारतीय धार्मिक एवं दार्शनिक सम्प्रदायों के साथ–साथ एशियायी देशों की सभ्यता–संस्कृति को व्यापक रूप में प्रभावित किया। विश्व शान्ति स्थापित करने में बौद्ध धर्म का अमूल्य योगदान रहा है। इसमे समाहित महाकरुणा के अन्तर्गत संसार के समस्त प्राणि इसकी करुणा के पात्र हैं। स्वार्थपरता के विनाश में बुद्ध वचनों का अविस्मरणीय योगदान है, जो पवित्र बुद्धवचन पालि त्रिपिटकों तथा महायान सूत्रों में सन्निहित हैं। छठी शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर लगभग 12वीं–13वीं शताब्दी के अन्त तक बौद्ध धर्म अनेक सम्प्रदायों में विभाजित होकर विकसित एवं पल्लवित हुआ। जिसमें एक ओर महायानी दर्शन एवं साधना को चीन, जापान, तिब्बत, मंगोलिया और कोरिया आदि देशों ने अंगीकार किया, वहीं दूसरी ओर स्थविरवादी परम्परा का विकास श्रीलंका, वर्मा, म्यंममार, जावा एवं मालया आदि देशों मे हुआ।

संदर्भ

1. एस.सी. चटर्जी एवं डी.एम. दत्त : एन इन्ट्रोडक्सन टू इण्डियन फिलॉसफी
2. राहुल, सांकृत्यायन : दर्शन दिग्दर्शन
3. विलियम, जेम्स : विल टू विलोम एण्ड अदर एलेज
4. सी.डी., शर्मा : ए क्रिटिकल सर्वे ऑफ इण्डियन फिलॉसफी
5. इ.ए., सिंगर : मोडर्न थिंकर्स एण्ड प्रजेन्ट प्रोबलेम्स
6. झा, आनन्द : चार्वाक दर्शन
7. फ्रेडरिक, एंगल्स : डयूरिंग मत–खंडन
8. पांडेय, संगमलाल : नीतिशास्त्र का सर्वेक्षण
9. राधाकृष्णन् : भारतीय दर्शन, भाग एक, (अनुदित, स्व. नन्द किशोर गोभिल)
10. राय, एम.एन. : भौतिकवाद
11. देवराज, एन.के. : पूर्वी और पश्चिमी दर्शन
12. ओझा, वो. एन. राय, एम.एन. एण्ड हिज : फिलॉसफीकल आइडियाज
13. पाण्डेय, संगम लाल : नीतिशास्त्र का सर्वेक्षण